

# नेहरु की वैचारिक विरासत

डॉ. कैलाश चन्द सामोता

Copyright © Dr. Kailash Chand Samota  
All Rights Reserved.

This book has been self-published with all reasonable efforts taken to make the material error-free by the author. No part of this book shall be used, reproduced in any manner whatsoever without written permission from the author, except in the case of brief quotations embodied in critical articles and reviews.

The Author of this book is solely responsible and liable for its content including but not limited to the views, representations, descriptions, statements, information, opinions and references ["Content"]. The Content of this book shall not constitute or be construed or deemed to reflect the opinion or expression of the Publisher or Editor. Neither the Publisher nor Editor endorse or approve the Content of this book or guarantee the reliability, accuracy or completeness of the Content published herein and do not make any representations or warranties of any kind, express or implied, including but not limited to the implied warranties of merchantability, fitness for a particular purpose. The Publisher and Editor shall not be liable whatsoever for any errors, omissions, whether such errors or omissions result from negligence, accident, or any other cause or claims for loss or damages of any kind, including without limitation, indirect or consequential loss or damage arising out of use, inability to use, or about the reliability, accuracy or sufficiency of the information contained in this book.

Made with ♥ on the Notion Press Platform  
[www.notionpress.com](http://www.notionpress.com)

माता पिता को समर्पित ।













### नेहरू की वैचारिक विरासत

आर्थिक, राजनीतिक एवं दार्शनिक विचारों में अन्तर विद्यमान रहा। तथापि गांधी के विचारों को नेहरू ने अपने कर्षों में अपनी रणनीति के अनुरूप अपनाया है। इसके लिए उसके आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक व दार्शनिक विचारों को गहराई से समझने की आवश्यकता है। नेहरू के समाजवादी विचारों पर निर्णायक प्रभाव सोशियल रूस के साम्यवादी नेतृत्व का पड़ा, इसमें कोई सन्देह नहीं है। नेहरू के समाजवादी दृष्टिकोण पर समय के अनुरूप एक परिवर्तित प्रभाव दिखायी देता है। इसके बाद समाजवाद के लचीले स्वरूप की ओर तथा अन्ततः भारतीय परिस्थितियों के अनुरूप 'समाजवादी समाजवाद' की तरफ बढ़ते हैं।

इसलिए अनेक विचारकों एवं साधियों ने कई बार नेहरू की समाजवाद की धारणा पर प्रश्न उपस्थित हैं और उसे शंका की दृष्टि से देखा है। जैसा कि सुभाषचन्द्र बोस ने कहा कि-

‘‘राजनीति की शुरुआत का रहस्य तब पता चलता है जब तुम वास्तव में जो हो, उससे अधिक मजबूत दिखायी देते हो। राजनीतिक एवं सामाजिक संघर्ष एक-दूसरे के लिए परिस्थितियों उत्पन्न करते हैं। वे हरिपुरा लेशन में (1938) अन्धश्रौंय उद्बोधन के दौरान कह रहे थे कि मेरे भस्तिष्क में कोई सन्देह नहीं है कि राष्ट्र की प्रमुख समस्याओं, निर्धनता व बीमारी या बेकारी का और वैज्ञानिक पद्धति से उत्पादन व प्रगती वितरण का समाधान केवल समाजवादी रेखाओं से ही हो सकता है।

‘‘तथापि नेहरू एक ही समय में स्वयं को पूर्णतः समाजवादी बताते हैं और उसी समय व्यक्तिवादी। यह कैसे संभव हो सकता है कि समाजवादी और व्यक्तिवादी एक साथ हो। वे दोनों एक-दूसरे के प्रतिवाद हैं।

नेहरू की समाजवाद की धारणा को अस्पष्ट बताया गया है जिसके पीछे अनेक कारण हो सकते हैं। तथापि प्रधान म्हायुद्ध की समाप्ति एवं सोवियत संघ में साम्यवादी क्रान्ति (1917) की सफलता स्थापित हुई। नियोजित आर्थिक कार्यक्रम के उत्साह में नेहरू ने इस युनिजन को पसंद किया। नवम्बर, 1927 के आरंभ में बोल्शेविक क्रान्ति की 10वीं वर्षगांठ पर नेहरू परिवार को निमंत्रण प्राप्त हुआ। जैसा कि माइकल ब्रेकर लिखते हैं कि 1927 की नेहरू की मास्को की यात्रा और अन्त में केवल चार दिन की इस यात्रा ने नेहरू के राजनीतिक दृष्टिकोण को एक निर्दिष्ट स्वरूप प्रदान किया। जो कि भारत की आजादी तक और उसके बाद भी महत्वपूर्ण रूप से बना रहा। साम्यवाद, राष्ट्रवाद और समाजवाद के संदर्भ में उनमें एक नवीन दृष्टि देखने को मिली। आगे चलकर फेबियनवाद की अवधारणा ने इसकी मूल दिशा को नवीन मोड़ प्रदान किया।

समाजवाद स्वयं में एक बहुमुखी एवं परिवर्तित स्वरूप वाली दार्शनिक अवधारणा है। अतः नेहरू के सन्दर्भ को समझने के लिए इसके बारे में जानकारी होना अपरिहार्य है। यद्यपि समाजवाद का उद्गम यूरोप महाद्वीप में हुआ तथापि इस विचारधारा ने बहुत अधिक लोकप्रियता अर्जित की जिससे यह अनेक देशों में विस्तृत हो गयी। अनेक राष्ट्रों में इसे एक प्रिन्स स्वरूप में अपनाया है। अतः इसके अर्थ में विभिन्नता एवं विविधता उत्पन्न हो गयी। यही कारण रहा कि सी.ई.एम. जोड़ जैसे विचारकों ने इसे ‘रंग बदलने वाली या आकार बदलने वाली टोपी’ की तरह देखा है।

इसे समाजवाद या समष्टिवाद, फेबियनवाद, श्रेणी समाजवाद, श्रमिक, संधावाद, प्रजातांत्रिक समाजवाद और वैज्ञानिक समाजवाद या मार्क्सवाद इत्यादि के रूपों में विभाजित किया गया है। राजकीय समाजवाद का मुख्य ध्येय पूंजीवादी प्रणाली का अन्त कर एक नवीन प्रणाली की स्थापना करना है। जो सामाजिक व आर्थिक क्षेत्र में समानता की स्थापना के लिए राज्य को सकारात्मक भूमिका प्रदान करने का समर्थन करती है। इसका फेबियनवादी स्वरूप जो कि इंग्लैण्ड में फेबियन सोसायटी के विचारों का प्रतिरूप है। उसका मुख्य उद्देश्य शान्तिपूर्ण मन्दगामी रणनीति के माध्यम से विद्यमान पूंजीवादी व्यवस्था में परिवर्तन की कालत करना है। यह मूलतः लोकतांत्रिक प्रणाली का विकेन्द्रीकरण करने में राज्य को अधिक भूमिका प्रदान करने वाली समाजवादी विचारधारा है।

श्रेणी समाजवादी अवधारणा समाज में सम्पूर्ण व्यवस्था का उद्देश्यात्मक व्यवसायिक प्रतिनिधित्व के रूप में विकेन्द्रित श्रेणी प्रारूप को प्रदान करने का समर्थन करती है। यह लोकतांत्रिक पद्धति एवं संवैधानिक साधनों में विश्वास करती है। दूसरी ओर श्रमिक संधावाद (सिन्डीकेलिज्म) समाजवाद का फ्रांसीसी स्वरूप है जो विद्यमान व्यवस्था में परिवर्तन के लिए क्रांतिकारी, अक्रान्तांत्रिक और आन्दोलनकारी साधनों का सहारा लेने का समर्थन करती है। समस्त व्यवस्था पर श्रमिकों के नियंत्रण में विश्वास रखती है। क्रॉस के जॉर्ज सोर्रेल इसके प्रबल समर्थक थे।

मार्क्सवादी विचारधारा जर्मन लेखक कार्लमार्क्स के दिग्गज की उपज है जो ऐतिहासिक, वैज्ञानिक एवं तार्किक स्वरूप में विद्यमान दोषपूर्ण आर्थिक प्रणाली को समाप्त कर एक धर्मशूहीन, वर्ग विहीन और राज्यविहीन प्रणाली की स्थापना का समर्थन करती है। परन्तु इसे व्यवहार में लागू करना आसान नहीं। अतः इसका व्यवहारिक स्वरूप पहली बार 1917 में लेनिनवाद के नेतृत्व में स्थापित हुआ। यह वही स्वरूप है जिसने नेहरू को व्यापक रूप से प्रभावित किया।

परन्तु यदि हम गहराई में अन्तरकर देखें तो नेहरू की समाजवादी विचारधारा पर भी ब्रिटिश उदारवाद, फेबियनवाद, मार्क्स की वैज्ञानिक विचारधारा, गांधी की साधन व साधन की पद्धति की धारणा, स्वयं भारतीय जनमानस और देश की विभिन्न राजनीतिक, आर्थिक दशाओं का व्यापक प्रभाव पड़ा है। अतः उसका एक नवीन स्वरूप उद्भूत हुआ जिसे ‘समाजवादी समाजवाद’ की नेहरूवादी धारणा कहा जा सकता है। 1927 के बोल्शेविक सम्मेलन से 1955 के अवाड़ी कांग्रेस अधिवेशन तक नेहरू की समाजवादी विचारधारा में व्यापक परिवर्तन हुआ। वह



### नेहरू की वैचारिक विरासत

अक्सरी भी समानता निहित होती है। राज्य द्वारा प्रत्येक नीति पर जनता की सहमति प्राप्त करना लोकतंत्र की घुरी है। यदि जनता से यह अधिकार छीन लिया जाये तो स्वाधीनता का अन्त निकट होता है। यद्यपि प्रचार साधनों का दुरुपयोग कर जनता को गुमराह करने का खतरा लोकतंत्र में सदैव बना रहता है तथापि इस दोष के कारण इसे त्याग नहीं सकते हैं। जनमत आवश्यकतानुसार शासन को बदल सकता है। व्यक्ति की सुरक्षा के साथ ही मनुष्यवादी व्यक्ति से भी सामाजिक तंत्र की रक्षा की आवश्यकता होती है। अनेक बार कोई समूह शक्ति प्राप्त कर इसका गलत उपयोग कर सकता है, परन्तु ऐसी असामाजिक ताकतों से लोकतंत्र को बचाना व्यक्ति का ही ध्येय है। यदि वह असफल होगा तो दोष प्रणाली का नहीं वरन् व्यक्ति की असफलता को जायेगा। लोकतंत्र शासन के अन्य प्रकारों की तुलना में लोगों से उच्च प्रतिमानों की अपेक्षा रखता है, यदि जनता इनको प्राप्त न कर पाती है तो लोकतंत्र संकट में घसा जाता है।

नेहरू का मानना था कि केवल संवैधानिक ढांचे व नियमों की श्रेष्ठता से लोकतंत्र नहीं बनता है वरन् यह लोगों के चरित्र से संवाचित होता है। संविधान स्वयं जन अभिव्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता है, यदि वह इनमें व्यक्त करने में असमर्थ हो तो श्रेष्ठतम संविधान भी निरस्त कर दिये जाते हैं। सचको समय के अनुरूप बदल मिलाकर चलना अपरिहार्य है क्योंकि आधुनिक राज्य केवल पुलिस राज्य नहीं, वरन् कल्याणकारी राज्य है जो जन समस्याओं से सरोबर रखता है। भारत ने ब्रिटिश संसदीय प्रणाली को स्वीकार किया है। अतः सामाजिक व आर्थिक परिवर्तन और विकास की और उन्मुख मानवीय समाज के साथ तालमेल बैधान अनिवार्य है।

नेहरू ने लोकतंत्र को परिवर्तन की शान्तिपूर्ण पद्धति के रूप में स्वीकार करते हुए इसे पवित्र साध्य प्राप्ति का पवित्र साधन माना है। भारत संसार का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है, जहाँ गणतंत्र की सफलता के लिए प्रयत्न व प्रयोग किये जा रहे हैं। लिच्छवी एवं वैशाखी के प्राचीनतम गणतंत्र इसकी सफलता के उदाहरण हैं। हमारा संविधान इस रूप में प्रतिबद्ध रहेगा। जनतंत्र प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अन्तिम शक्ति जनता को सौंपता है। परन्तु यह परिभाषा में नहीं वरन् व्यवहार में स्थापित होने पर ही सफल हो पाता है।

जनतंत्र ही वह शासन प्रणाली है जो प्रत्येक व्यक्ति को समान अवसर उपलब्ध करा सकती है, उन्हीं के शब्दों में -

“यों किसी पूर्ण धारणा से आन्तर्द्व नहीं हैं और कोई ऐसी धारणा भी नहीं, जिससे आप धार्मिक या कुछ और कहे, परन्तु मैं मानव की जन्मजात आध्यात्मिकता में विश्वास करता हूँ। मेरा मानव की जन्मजात गौरव की महिमा में विश्वास है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि प्रत्येक व्यक्ति को समान सुअवसर प्राप्त होने चाहिए। मैं एक आदर्श के रूप में ऐसे समाज में विश्वास करता हूँ, जिसमें सच्ची समानता प्राप्त हो, मानव-मानव के बीच कोई अन्तर न हो, बल्कि हो उसकी प्राप्ति कठिन हो। मैं धनियों के दुर्गुणों को उतना ही नापसन्द करता हूँ जितना कि निर्धनों की निर्धनता को।”

नेहरू निश्चय ही एक महान् लोकतांत्रिक व्यक्ति थे। उन्हें विश्वास था कि संसदीय लोकतंत्र की उन्नति से ही प्रत्येक व्यक्ति के संगठन बनाने, चिन्तन करने और अभिव्यक्ति के मूल अधिकारों की स्वतंत्रता की रक्षा हो सकती है। वे चाहते थे कि भारत लोकतांत्रिक प्रक्रिया के सहारे ही विकसित हो। नेहरू की लोकतांत्रिक धारणा अपने में एक विराट स्वरूप प्राप्त किये हुए है। जिसमें सामान्यतया चार केन्द्र बिन्दु विद्यमान रहे हैं- (1) वैयक्तिक स्वतंत्रता अर्थात् व्यक्तिगत क्षमताओं, योग्यताओं और सहिष्णुता की उन्नति करना, न केवल उनकी जो सहमत है वरन् उनकी भी जो उनके साथ असहमत हो। (2) प्रतिनिधि सरकार अर्थात् जो लोकप्रिय प्रभुसत्ता और निर्वाचित प्रतिनिधित्व पर आधारित होती है। (3) आर्थिक एवं सामाजिक समानता अर्थात् यह समानता और स्वतंत्रता और समतावादी समाजवाद के बीच एक उचित संतुलन स्थापित करने की मंगल है। (4) सामाजिक चेतना अर्थात् आत्म अनुशासन। यहाँ आर्थिक न्याय के बिना लोकतंत्र और लोकतंत्र के बिना आर्थिक न्याय को सुनिश्चित करना संभव नहीं है।

भारत में लोकतंत्र का मूढ़त्व एवं स्थापितता बना हुआ है क्योंकि इसके मानक जवाहरलाल नेहरू द्वारा स्थापित किये गये हैं। दक्षिणी एशिया में भारतीय लोकतंत्र एक सफल यात्रा पर आगे बढ़ रहा है। यह आज दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। वास्तविक रूप से यदि हम लोकतंत्र की उन्नति चाहते हैं तो हमें इसे एक विशाल बरगद के वृक्ष जैसा स्वरूप प्रदान करना होगा जिसकी जड़े अनवरत जमीन से जुड़ी रहती हैं और इससे उसे व्यापक सहयोग और मजबूती मिलती रहती है। यह जनसमर्थन को अभिव्यक्त करती है। उसकी गहराई में मानववाद, प्रबल व्यक्तिवाद एवं लोगों के कल्याण का पूर्ण विश्वास दिखायी देता है। यही कारण है कि लोग तानाशाही का विरोध व लोकतंत्र को पसंद करते हैं। संसदीय लोकतंत्र विषय पर आयोजित पहली अखिल भारतीय सम्मेलन 1956 में नेहरू ने अवलोकन करते हुए स्पष्ट किया कि-

“यदि लोकतंत्र एक वक्ता के रूप में होता तो वह ठीक वही कहता कि वह साध्य प्राप्ति का एक साधन है। साध्य क्या है या हमारा ध्येय क्या है मैं यह तो नहीं जानता कि मेरे साथ कितने लोग सहमत हैं परन्तु मैं यह कह सकता हूँ कि साध्य या अभिप्राय होगा प्रत्येक व्यक्ति का सद् जीवन (क्यावक सपना)।”

लोकतंत्र को बहाल, वातावरण और सहमति से निर्णयों को स्वीकृत करने वाली पद्धति मानते हुए नेहरू ने इसे अल्पसंख्यकों की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण माना है। लोकतंत्र को शक्ति एवं बुद्धि दोनों ही दशाओं में कार्य के अनुरूप मानते हुए वे इसे गतिशील परिवर्तन का माध्यम मानते थे। यद्यपि हमने सार्वभौमिक मतधिकार की व्यवस्था बिना किसी भेदभाव के स्थापित की गई है तथापि शिक्षा के स्तर को बढ़ाना लोकतंत्र के विकास हेतु अपरिहार्य है।

नियोजित आर्थिक विकास की धारणा में नेहरू की पूर्ण आस्था थी। नेहरू राष्ट्रवादी नेताओं में प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने भारतीय समाज के











































































































